International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 12 Issue 11, November 2022,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

जयशंकर प्रसाद के काव्य में युग–बोध

डॉ. कामना कौशिक
विभागाध्यक्षा हिन्दी
सी.एम.के. नेशनल पी.जी.
महाविद्यालय, सिरसा।

श्री जयशंकर प्रसाद का जन्म सन 1889 ई० में काशी के प्रतिष्ठित, सम्पन्न परिवार में हुआ था। 12 वर्ष की आयु में पिता का स्वर्गवास होने के कारण परिवार की अर्थ व्यवस्था चरमरा गई। बड़े भाई शम्भुरत्न ने इनकी पढ़ाई की व्यवस्था घर पर कर दी। दुर्भाग्यवश 17 वर्ष की आयु में बड़े भाई शम्भुरत्न का साया भी इनके सिर से उठ गया। संघर्षमयी जीवन में प्रसाद जी ने संस्कृत, वेद, पुराण, उपनिषद्, स्मृति आदि विषयों का गहन अध्ययन किया। अपनी विशिष्ट प्रतिभा से इन्होंने काव्य–रचनाओं क साथ–साथ नाटक, उपन्यास और कहानियाँ भी लिखी। इनकी प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं :–

उपन्यासः 'कंकाल', 'तितली' और 'इरावती'।

नाटकः 'स्कन्दगुप्त', 'अजातशत्रु', 'विशाख', 'चन्द्रगुप्त', 'राज्यश्री', 'ध्रुवस्वामिनी', 'कल्याणी', 'प्रायश्चित', 'परिणय', 'करूणालय', 'जनमेज्य का नागयज्ञ', 'एक घूँट' आदि है।

कहानी संग्रहः 'छाया', 'आंधी', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप' और 'इन्द्रजाल' आदि है।

काव्य रचनाएंः 'चित्राधार', 'प्रेम पथिक', 'आँसू', 'कानन कुसुम', 'लहर', 'झरना' और 'कामायनी' है।

प्रसाद जी का जीवन सदैव युद्धस्थल बना रहा। 'अन्तर्द्वन्द्व' तथ 'बहिर्द्वन्द्व' के तूफान से वेअपने आपको सुरक्षित नहीं रख पाए। संघर्षमय जीवन का अन्त हुआ ही था कि अल्पायु में ही मृत्यु ने इन्हें अपने गले लगा लिया। सन 1937 में मात्र 48 वर्ष की आयु में हिन्दी के रविन्द्र और मांसरस्वती के लाडले पुत्र ने इस संसार को अलविदा कह दिया। शरीर की नश्वरता जीवन का कटु सत्य है। परन्तु कर्म की अजरता व अमरता शाश्वत है। प्रसाद जी द्वारा रचित उच्च कोटि का साहित्य अजर–अमर है। अतः प्रसाद जी अपनी रचनाओं के माध्यम से सदैव हमारे मध्य उपस्थित रहेंगे।

सजग कवि युग दृष्टा होता है। अपने युग की विभिन्न परिस्थितियों को वह प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप में अपनी साहित्यिक कृतियों में चित्रित करता है। युगीन परिस्थितियों का प्रभाव साहित्यधारा में व्यक्त हुए बिना नहीं रह सकता, इसलिए साहित्यकार युग सृष्टा भी होता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के कारण वह सामाजिक नीति–नियमों का अनुसरण करता है। परिवार मनुष्य की सामाजिक आवश्यकता है। प्रसाद युग में कुटुम्ब प्रथा का प्रचलन था। यद्यपि उसमें दरारे पड़ने लगी थी। 'रामचरित मानस' में राम आदर्श बेटा, सीता आदर्श पत्नी,

लक्ष्मण आदर्श भाई, राजा दशरथ आदर्श पिता व कौशल्या आदर्श माता के रूप में चित्रित की गई है। मानव की प्राथमिक पाठशाला परिवार है। यहीं परिवार उसके आदर्श व्यक्तित्व का निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रसाद जी ने राम और सीता के आदर्श सुखमय दाम्पत्य जीवन पर 'चित्रकूट' कविता में प्रकाश डाला है। सीता अपने गृहस्थ जीवन का सुख पति के साथ स्वीकारती हुई अपने प्राण प्रिय राम को कहती है–

> ''नाथ! यह क्या कहते हैं?
> नारी के सुख सभी साथ पति के रहते हैं।
> कहो उसे प्राण प्रिय! अभाव रहा फिर किसका,
> विभव चरण का रेणु तुम्हारा ही है जिसका।''[1]

भारतीय स्त्री अपने आपको पति के साथ सुरक्षित अनुभव करती है। पति का साथ उसे धन–सम्पदा व ऐश्वर्य से अधिक प्रिय है। यहीं कारण है कि सीता अपने ठाठ–बाठ को त्यागकर स्वेच्छा से अपने पति राम के साथ वनवास जाने को तत्पर है। पत्नी का वास्तविक सुख पति के सान्निधय में है। वहीं उसका वास्तविक आभूषण है। इसी सत्य का उजागर प्रसाद जी 'चित्रकुट' कविता में करते हैं तथा वे राम के माध्यम से कहते हैं :–

> ''बोले राघव–प्रिय! भयावह से इन वन में,
> शंका होती नहीं, तुम्हारे कोमल मन में।
> कहा जानकी ने हँसकर – उसको है, क्या डर,
> जिनके पास प्रवीण धनुर्धर ऐसा सहचर।''[2]

पति–पत्नी दोनों जीवन रूपी गाड़ी के महत्वपूर्ण पहिए है। दोनों के संतुलन के लिए दोनों का एक–दूसरे के प्रति विश्वास व समर्पण जरूरी है। इसी से दाम्पत्य जीवन आनंदमय है। सुखद दाम्पत्य जीवन से ही संस्कारमय परिवार की कल्पना संभव है। उच्च व श्रेष्ठ परिवार से ही सामाजिक विकास संभव है। सामाजिक विकास में ही मानव कल्याण है। हम अपने धर्म व कर्म में संतुलन रखकर राष्ट्रहित के लिए अपने कर्तव्य का निर्वहन पूर्ण ईमानदारी से करे तो विदेशी शक्ति निश्चित रूप से पराजित होगी और उनका मनोबल इतना कमजोर हो जाएगा कि वह फिर कभी भारत देश की ओर देखने का साहस न कर पाएँगे। भारत देश में पुरातन काल से ही नारी की विशिष्ट योग्यताओं के कारण उसे देवी तुल्य माना गया है। प्रसाद युग में परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़े भारत देश में स्त्रियों की स्थिति भी दयनीय व चिंतनीय होती जा ही थी। उसे मात्र भोग्या माना जाने लगा और घर की चहारदिवारी तक सीमित करने का प्रयास किया गया। बहु–पत्नी प्रथा, अशिक्षा, पर्दा प्रथा, बलात्कार, दहेज प्रथा, कन्या हत्या जैसे घृणित कुकृत्य बढ़ते ही जा रहे थे। पीड़ित उपेक्षित नारी को दर्द से बाहर निकालने के लिए अनेकों समाज–सुधारकों व रचनाकारों ने नारी के प्रति आस्था जागृत करने का प्रयास किया। नारी के

प्रति उदारता और करूणा का दृष्टिकोण अपनाकर प्रसाद जी ने नारी जीवन की विषमताओं को दूर करने का प्रयास किया। नारी जीवन के प्रति संकुचित सोच रखने वाले पुरूषों का प्रसाद जी ने खुलकर विरोध किया है। नारी को मात्रदेह दृष्टि से देखने वाले पुरूषों के विरूद्ध आवाज़ उठाते हुए प्रसाद जी कहते है :–

''छल वाणी की वह प्रवंचना,
हृदयों की शिशु को
खेल खिलाती, भुलवाती जो,
डसे निर्मल विमुता को!''[3]

नारी को कमजोर और हीन समझने वाले समाज को फटकारते हुए कवि प्रसाद सावधान करने का प्रयास करते है। नारीत्व शक्ति त्याग और बलिदान की ऊँची सीढ़ियाँ पार कर मानव का मार्गदर्शन करती है। नारी उत्थान की कामना करते हुए प्रसाद जी उदारवादी दृष्टिकोण के साथ पुरूष वर्ग को सचेत करते हुए कहते हैं :–

''तुम भूल चुके पुरूषत्व मोह में, कुछ सत्ता है नारी की,
समरसता है संबंध बनी, अधिकार और अधिकारी की।''[4]

प्रसाद जी ने मात्र नारी उत्थान की ही कामना नहीं की, अपितु विश्व बधुंत्व के साथ अपने विचारों को रचनाओं में अभिव्यक्त कर विश्व का पथ प्रशस्त किया। उनकी दृष्टि विश्वदृष्टि के साथ जुड़कर समस्त मानव जाति के कल्याण की कामना करती है। मानव जाति में बंधुत्व एवं समत्व की भावना को प्रतिष्ठित करना चाहते थे।

''जननी जिसकी जन्मभूमि हो,
वसुन्धरा ही काशी हो।
विश्व स्वदेश भ्रातृ मानव हो,
पिता परम अविनाशी हो।''[5]

प्रसाद जी युगचेता कवि थे। 'बीती विभावरी जाग री' उनकी युग चेतना का परिचायक ऐसा ही जागरण गीत है। पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए नवयुवकों को आलस्य, विलास, निन्द्रा, त्याग कर स्वाधीनता रूपी नवप्रभात लाने का आग्रह किया है। 'कामायनी' के 'संघर्ष सर्ग' में त्याग से स्वाधीनता रूपी नवप्रभात लाने का आग्रह किया है। मनु की वाणी मेंस्वाधीनता संघर्ष के स्वप्नों एवं जागरण का संदेश अनुभव किया जा सकता है।

''मैं चिर–बंधन हीन, मृत्यु सीमा उल्लघंन,

करता सतत चलूंगा यह मेरा है दृढ़ प्रण।
महानाश की सृष्टि बीच जो क्षण हो अपना
चेतना की तुष्टि वही है फिर सब अपना।''[6]

प्रसाद जी का युग राजनैतिक दासता का युग था। भारतमाता पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ी मुक्ति के लिए कराह रही थी। अंग्रेजी सता भारतवासियों को मानसिक रूप से गुलाम बनाकर भारत के गौरवपूर्ण इतिहास को कलंकित कर उस पर काली स्याही फेर रही थी। यह युग अंग्रेजों की कूटनीतियों के कारण अनाचार व अत्याचार का युग बन गया। अंग्रेज पारस्परिक हिंसा और घृणा की भावना का प्रचार करने में लगे हुए थे। भारतीय जनता शोषण की चक्की में पिस रही थी। विदेशी शासकों की कूटनीतियां देश की शक्ति को निर्बल बना रही थी। महाकवि प्रसाद जी का आविर्भाव एक ऐसे विशिष्ट समय में हुआ जब भारतवासी अंग्रेजो की दासता से मुक्त होने के लिए लड़ाई लड़ रहे थे। भारतीयों में स्वाधीनता का भाव जगाने के लिए महात्मा गांधी, नेहरू, मोलाना आज़ाद जैसे अनेक स्वतन्त्रता सेनानी एवम् देशभक्त पथ–प्रदर्शक बनकर आगे आए। महाकवि प्रसाद जी की रचनाएं अंग्रेजों के विरूद्ध संघर्ष में भारतीयों में हिम्मत–जोश व स्वाधीनता का भाव जागृत करने का श्लाघनीय प्रयास कर रही थी। एक सच्चा साहित्यकार ही अपने देश की समकालीन परिस्थितियों को अपने साहित्य में बेखौफ व निडर होकर अभिव्यक्त करता है। देश की पराधीनता की स्थिति से प्रसाद जी भली–भाँति परिचित थे। पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए वे बेचैन थे। भारत माता की दयनीय स्थिति से प्रसाद जी क्षुब्ध एवं दुखी थे। देश की पीड़ा को अपनी पीड़ा मानना, अपना दर्द समझना ही राष्ट्रप्रेम कहलाता है। कवि भारतवासियों में राष्ट्र प्रेम का भाव जागृत करने का प्रयास करते हुए कहते हैं :–

''और यह क्या तुम सुनते नहीं,
विधाता का मंगल वरदान।
शक्तिशाली हो, विजयी बनो,
विश्व मे गूंज रहा जयगान।।''[7]

समकालीन परिस्थितियों में भारत को अंग्रेजी सत्ता से मुक्ति दिलाना प्राथमिक कार्य था। प्रसाद जी इसी मुक्ति का सपना देखते हुए महाराणा की कल्पना करते हैं। 'महाराणा का महत्व' काव्य में कवि की देश–प्रेम की भावना चित्रित हुई है।

''सच्चा साधक है सपूत निज देश का,
मुक्तपवन में पला हुआ यह वीर है।।''[8]

भारत की राजनीति में गांधी जी का प्रवेश और साहित्य में छायावाद का आगमन दोनों की शुरूआत लगभग एक ही समय में होती है। इसी कारण से दोनों एक–दूसरे से प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 12 Issue 11, November 2022,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

हुए हैं। स्वाधीनता संग्राम में गांधी जी ने सत्य और अहिंसा को अपना हथियार बनाया। प्रसाद जी ने गांधी जी के अहिंसा परमो धर्म के सिद्धान्त का अनुसरण किया। इनकी रचना 'कामायनी' की नायिका 'श्रद्धा' के चरित्र में गांधी जी के सिद्धान्तों की छाप स्पष्टतय दृष्टिगोचर हो रही है। इसी प्रकार 'कामायनी' में जीव–हत्या का विरोध करते हुए समस्त जगत के लिए जीवन अधिकार की भावना व्यक्त करते हुए कहते हैं :–

"ये प्राणी जो बचे हुए हैं
इस अलग जगती के,
उनके कुछ अधिकार नहीं
क्या वे सब ही फीके।"[9]

प्रसाद जी के काव्य में सत्य और अहिंसा के माध्यम से हृदय परिवर्तन कर उसमें करूणा भाव जागृत करने में गांधीवादी चिन्तन का प्रभाव स्पष्टतयः परिलक्षित होता है। इनकी कविताओं में ऐतिहासिक प्रसंगों के माध्यम से राष्ट्र–प्रेम की भावना को अभिव्यक्त किया गया है। धर्म की रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग कामना करना धर्म के प्रति उनकी अखण्ड आस्था दर्शाता है जो उस समय की राष्ट्रीयता का मूलाधार है।

"भारत का सिर आज इसी सरहिंद में,
गौरव–मंडित ऊँचा होना चाहता है।।"[10]

देश की यथार्थ स्थिति का चित्रण करने के पीछे कवि की मंसा भारतीयों की सुप्त चेतना को जागृत कर स्वाधीनता आन्दोलन के लिए उन्हें प्रेरित करना था। राष्ट्र रक्षा के लिए राष्ट्र प्रेमियों के प्राणों का उत्सर्ग याद कर कवि मन–मस्तिष्क व्यथित हो उठता है। ऐतिहासिक गौरव की याद और सिपाहियों की शहादत से कवि मन चित्कार उठता है–

"जो घनीभूत पीड़ा थी, मस्तक में स्मृति–सी छायी।
दुर्दिन में आंसू बनकर, वह आज बरसने आई।।[11]

'पेशोला की प्रतिध्वनि' में भी युगीन परिस्थितियों का प्रभाव कवि के मन–मस्तिष्क पर अनुभव किया जा सकता है। देश की स्वाधीनता के प्रति कवि चिन्तित है। वह समसामयिक विषम परिस्थितियों में यह सोचने पर विवश हो जाते है कि आखिरकार वह कौन है? जो स्वाधीनता की चिंगारी को राख होने से बचाएगा।

"कौन लेगा भार यह?
कौन विचलेगा नहीं?
दुर्बलता इस अस्थिमांस की–

ठोंक कर लोहे से, परख कर वज्र से,
प्रलयोत्का–खण्ड के निकष पर कसकर,
पूर्ण अस्थिपुंज सा हंसेगा अट्टहास कौन।''[12]

यह युग दो महायुद्धों की विभीषिकाओं के बीच का युग था। संत्रस्त मनुष्य नरसंहार से भयभीत होकर अपनी रक्षा के लिए शरण ढूंढ़ने लगा था। राष्ट्रभक्त शान्ति एवं एकता के लिए विभिन्न प्रकार की योजनाएं क्रियान्वित करने का प्रयास कर रहे थे। विश्वशांति का मंत्र 'कामायनी' महाकाव्य में दर्शनीय है :–

''जगती–तल का सारा क्रंदन,
यह विषमयी विषमाता।
चुभने वाला अंतरंग छल,
अति दारूण निर्ममता।''[13]

श्रद्धा ने संसार का कटु सत्य अभिव्यक्त किया है। संसार से विषमता, छल–कपट तथा निर्ममता दूर हो जाए तो विश्वशांति स्थापित हो सकती है। संसार की व्यथा व पीड़ा का अन्त तभी सम्भव है जब हम सबके मन का मैल धूल जाए और निर्मल–स्वच्छ मन से सभी के हित की कामना करें। विश्वशांति एक व्यक्ति या एक राष्ट्र के प्रयासों से संभव नहीं है, इसके लिए प्रत्येक राष्ट्र के व्यक्तियों को श्रेष्ठ–आदर्श विचारधारा के साथ अपने कर्तव्य का निर्वहन करना होगा। 'करूणालय' की पंक्तियां इसी सत्य को उजागर करते हुए देशवासियों से विश्वशांति का आह्वान करती है।

''विश्व हमारा शासन अभिनय रंग है,
हम पर है दायित्व सभी सुख–शान्ति का।''[14]

विश्वशांति की कामना तभी सार्थक हो सकती है, जब हम तुच्छ–संकीर्ण विचारों के कटघरे से बाहर निकलकर आपसी एकता को बनाये रखने का प्रयास करें। आपसी मन–मुटाव को छोड़कर पारस्परिक भेद–भाव दूर करके विश्व को एकसूत्र में पिरोने से ही आनन्द व सुख की प्राप्ति की कल्पना संभव है। अतः कवि ने विश्व के मानव रूपी पक्षीगण के लिए नीड़ बनाने की कल्पना की है।

''सब भेदभाव भुलवा कर
दुःख–सुख को दृश्य बनाता
मानव कह रे! यह मैं हूँ
यह विश्व नीड़ बन जाता।''[15]

कामायनी के 'श्रद्धा सर्ग' में कवि श्रद्धा के द्वारा सम्पूर्ण विश्व की जनता को एकता की भावना से जीवन में सफल होने की प्रेरणा दे रहे हैं। मानव सभ्यता के विकास के साथ–साथ मानव की नवीन खोजों ने

संसार को वैज्ञानिक उन्नति से महान शक्तियां प्रदान की है। ये शक्तियां मानव की स्वार्थ लिप्सा के कारण मानवीय मूल्यों को भस्मसात् कर रही है। वैज्ञानिकता का प्रयोग मानव कल्याण के विपरीत किया जा रहा है। जिससे यह वैज्ञानिक विकास मानव के लिए अभिशाप बनता जा रहा है। प्रसाद जी ने युगीन वैज्ञानिकता से उत्पन्न युद्ध के दुष्परिणामों का सजीव अंकन 'कामायनी' रचना में किया है। 'कामायनी' में मनु की प्रजा निरन्तर बढ़ती हुई वैज्ञानिकता से त्रस्त है, तो मनु वैज्ञानिक आविष्कारों का समर्थक। यथाः

''तो फिर बहूँ मैं आज अकेला जीवन रण में,
प्रकृति और उसके पुतलों के दल भीषण में।''[16]

'अशोक की चिन्ता' नामक कविता में प्रसाद जी ने प्राणी मात्र को सुख देने का आह्वान किया है। मनुष्य को अपने संकीर्ण विचारों को त्यागकर मानवमात्र की भलाई के लिए कार्य करना चाहिए। जीवन में हार–जीत के लिए वैज्ञानिक उन्नति का दुरूपयोग नहीं करना चाहिए। प्रसाद जी देश– प्रेम, विश्वशांति तथा गांधीवादी विचारधारा को जन–जन तक पहुँचाना चाहते हैं। उनकी काव्य रचनाओं में ये प्रयास स्पष्टतयः दृष्टिगोचर होते हैं। यथाः

''यह महादम्भ का दानव
पीकर अनंग का आसव
कर चुका महा भीषण रवा
सुख दे प्राणी को मानव
तज विजय पराजय का कुढंग।''[17]

विदेशी शासकों के आगमन से और उनकी कुटनीतियों के कारण 'सोने की चिड़िया' नाम से पुकारा जाने वाला भारत देश में अर्थाभाव का संकट मंडराने लगा, परिणामस्वरूप विपन्नता का नग्न नृत्य यहाँ होने लगा। समकालीन भारत की अर्थव्यवस्था चरमराने का अन्य प्रमुख कारण पूंजीवादी एवं साम्राज्यवादी की भोगवादी लालसा भी थी। युगदृष्टा–युगसृष्टा कवि जयशंकर प्रसाद जी देश को आर्थिक संकट से बाहर निकालना चाहते थे। इसलिए प्रसाद जी श्रम के महत्व का सन्देश अपनी रचनाओं के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाने का स्तुत्य प्रयास करते हैं। जिनकी झलक हमें सर्वप्रथम 'कामायनी' महाकाव्य में देखने को मिलती है। कवि का मानना है किसी भी राष्ट्र का विकास तभी संभव है जब राष्ट्र के नागरिक परिश्रमी हो। 'श्रद्धा' के माध्यम से कवि श्रम की महत्ता को रेखांकित करने का प्रयास करते हुए कहते हैं :–

''मनु की सतत् सफलता की वह उदय विजयिनी तारा थी,
आश्रय की भूखी जनता ने निजश्रम के उपहार दिये।

मनु का नगर बसा है सुन्दर सहयोगी है सब बनें,
दृढ़ प्राचीरों में मंदिर के द्वार दिखाई पड़े घने।''[18]

भारत देश हो या अन्य विदेशी देश हो सम्पूर्ण विश्व में अर्थ असन्तुलन का प्रमुख कारण मनुष्य की बढ़ती भोग लालसा है। यहीं भोग लालसा मनुष्य को विनाश की ओर ले जा रही है। जिससे उसके मन में अशांति, वचन में कटुता और जीवन में स्वार्थ पनपता जा रहा है। वह निरन्तर भ्रष्टता व विकृति के गर्त की ओर निरन्तर अग्रसर होता जा रहा है। भौतिक समृद्धि को एकत्रित करने की लालसा में वह दौड़ता ही जा रहा है। इस दौड़ में वह अशांत, व्याकुल और अतृप्त ही दिखाई देता है। वह मनुष्य से दानव बनता जा रहा है। मनुष्य को दानव से मानवता की ओर अग्रसर करना ही प्रसाद जी का मूल उद्देश्य था। इसलिए प्रसाद जी मनुष्य को जीवन की वास्तविकता के प्रति सचेत व सजग करने का प्रयास करते हैं। इन्द्रीयजन्य सुखों की लालसा से बाहर निकालकर जीवन के सच्चे सुख और आनन्द की राह दिखाने का प्रयास करते हैं।

''इस पथ का उद्देश्य नहीं है, श्रांत भवन में टिके रहना।
किन्तु पहुंचना उस सीमा तक, जिसके आगे राह नहीं।
अथवा उस आनन्द भूमि में जिसकी सीमा कहीं नहीं।''[19]

बढ़ती हुई यांत्रिकता ने देश में वर्ग भेद उत्पन्न कर दिया।यन्त्रों के पदार्पण के कारण मानव का स्थान मशीन ने ले लिया, जिससे भारतीय उद्योग धंधों और कृषि पर भीषण प्रहार हुआ है। गांधी जी ने आधुनिक यन्त्रवाद का विरोध किया, क्योंकि इससे अधिकतम व्यापार विदेशियों के हाथ में चला गया था और भारत देश में वर्ग विभाजन होने लगा था। यह वर्ग विभाजन प्रत्यक्ष रूप से अर्थ असमानता को दर्शा रहा था। गांधी जी अंग्रेजों की कुटनीतियों को अच्छी प्रकार से समझ गए थे। अतः गांधी जी ने उद्योगवाद का विरोध किया। प्रसाद जी ने युगीन औद्योगिकीकरण से उत्पन्न संघर्ष के विरोध में आवाज उठाई। यांत्रिकता से उत्पन्न वर्गभेद पर अपनी पीड़ा अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं :-

''अग्रसर हो रही यहां फूट,
सीमाएँ कृत्रिम रही टूट।
श्रम भाग वर्ग बन गया जिन्हें,
अपने बल का है गर्व उन्हें।''[20]

साहित्य और संस्कृति का घनिष्ट सम्बन्ध है। साहित्य समाज, धर्म एवं काल से प्रभावित होता है। संस्कृति मनुष्य के धर्म, वातावरण और संस्कारों से प्रेरित होती है। युग कवि जयशंकर प्रसाद अपने युग की सांस्कृतिक गतिविधियों से पूर्णतय अवगत थे। यहीं कारण है कि जब दीर्घकालीन दासता से भारतीय संस्कृति धूमिल होने लगी तब प्रसाद जी ने इतिहासपरक साहित्य का सृजन कर भारतीय

संस्कृति की महता को पुनर्जीवित किया। भारतवासियों में सत्यम् शिवम् सुन्दरम् का पथ प्रशस्त करने वाली भारतीय संस्कृति के प्रति पुनः आस्था, विश्वास, श्रद्धा भाव जागृत करने का प्रयास किया। दीर्घकालीन दासता से उत्पन्न विषमपूर्ण परिस्थितियों में आदर्शवाद की प्रस्थापना के लिए प्रसाद जी ने अपनी रचनाओं में आदर्श पात्रों की कल्पना के द्वारा भारतीय संस्कृति की महता को रेखांकित करने का प्रयास किया। 'कामायनी' के सभी पात्र कोई न कोई आदर्श अवश्य प्रस्तुत करते हैं। 'श्रद्धा' मानवतावाद के मंगलमय सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए कहती है :—

"विधाता की कल्याणी सृष्टि,
सफल हो इस भूतल पर पूर्ण।
पटे सागर बिखरे ग्रह पुंज,
और ज्वालामुखियां हो चूर्ण।"[21]

'महाराणा' का महत्व' काव्य में भी प्रसाद जी का पात्र अपने आदर्शों का पालन करते हुए अपने प्राणों की बलि देने से भी पीछे नहीं हटता। महाराणा प्रताप ने स्वाधीनता की सुरक्षा के लिए, अपने आदर्श मूल्य की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। प्रताप जी का व्यक्तित्व आदर्शमयी व्यक्तित्व था। इसी विशिष्ट व्यक्तित्व के कारण प्रसाद ने इन्हें आर्य—तेज, देशभक्त, जननी का सत्य पुत्र आदि नामों से सम्बोधित किया।

"जन्मभूमि के लिए, प्रजा सुख के लिए,
इतना आत्मोसर्ग भला किसने किया?
दुग्ध—फेन—निभशय्या को यों छोड़कर,
सुख पत्ते कौन चबाता है— कहो।
मातृभूमि की भक्ति, देशहित कामना,
किसको उतेजित करती है, वे कहाँ?"[22]

निःसन्देह प्रसाद जी ने आदर्शपूर्ण नर और नारी पात्रों के माध्यम से युग की आवश्यकता अनुरूप समाज के समक्ष आदर्शवाद को प्रस्तुत किया और भारतीय संस्कृति को पाश्चात्य देशों की कुदृष्टि से बचाने का प्रयास किया। धर्म भारतीय संस्कृति का प्राण है। धर्म में जिस रागात्मक पक्ष की प्रबलता रही है, वहीं रागात्मक पक्ष संस्कृति की आस्था है। मानव हृदय को निर्मल एवम् पावन बनाने की क्षमता धर्म में होती है। धर्म से ही मनुष्य में आस्था, विश्वास, समर्पण, प्रेमभाव, सद्भाव, ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा आदि भाव उत्पन्न होते है। प्रसाद युग में धर्म अपना वास्तविक स्वरूप खो रहा था। लोग जादू—टोने, भूत—प्रेत, अन्धविश्वास, पाखण्ड जैसी कुरीतियों से ग्रस्त होते जा रहे थे। धार्मिक परिस्थितियां विकराल

रूप धारण कर चुकी थी। धार्मिक दुर्गति से कवि हृदय व्यथित हो उठता है। धार्मिक अंधविश्वासों पर प्रहार करते हुए युगदृष्टा प्रसाद जी 'आदर्श' शीर्षक कविता में कहते हैं :–

''प्रार्थना और तपस्या क्यों?
पुजारी किसकी है शक्ति,
डरा है तू निज पापों से,
इसी से करता निज अपमान''[23]

पुराणपंथी धर्म के नाम पर पशु–बलि, स्त्री चरित्र के साथ खिलवाड़, अनैतिकता का साथ, मास–भक्षण आदि विकृत बाह्याचारों का आश्रय लेकर धर्म के शुद्ध रूप को मल्लीन करने में लगे हुए थे। ऐसा धर्म जो कुटिलता एवं अनीति द्वारा स्वार्थ का साधक बने, वह धर्म हो ही नहीं सकता। धर्म सत्य, अहिंसा, समता एवं सद्भाव का रक्षक होता है। मनुष्य के कर्म ऐसे होने चाहिए कि वे सत्यम्–शिवम्–सुन्दरम् का प्रतिबिम्ब बने। धर्म मनुष्य को सत्य की रक्षा एवं सद्कर्म के लिए प्रेरित करता है। प्रसाद जी 'कामायनी' में सत्य को परिभाषित करते हुए कहते हैं:

''और सत्य् यह एक शब्द तु,
कितना गहन हुआ है,
मेधा के क्रीड़ा–पंजर का
पाला हुआ सुआ है।
सब बातों में खोज तुम्हारी,
रट–सी लगी हुई है,
किन्तु स्पर्श में तर्क करों के,
बनता 'छुई–मुई' है।।[24]

प्रसाद जी उस समय के सुधारवादी आन्दोलनों से अत्यन्त प्रभावित थे। सुधारवादी संस्थाएँ जो अवतारवाद के विरूद्ध थी, उनके प्रभाव के परिणामस्वरूप इनकी रचनाओं में ऐतिहासिक चरित्र राम–कृष्ण आदि चरित्रों में युगीन महापुरूष को चित्रित किया है।

''मानव जाति बनेगी गोधन, और जो,
बनकर गोपाल घुमावेंगे उन्हें–
वहीं कृष्ण है आते इस संसार में
परमोज्ज्वल कर देंगे अपनी क्रांति से।''[25]

प्रसाद जी का भारती संस्कृति से अथाह स्नेह है, उनमें राष्ट्र–प्रेम की भावना कूट–कूटकर भरी हुई है। ऐतिहासिक–पौराणिक मूल्यों के माध्यम से आधुनिक युग की अनेक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने का प्रसाद का प्रयास अविस्मरणीय है। युगपुरोधा कवि प्रसाद जी ने अपनी युगीन परिस्थितियों का

गहनता से अध्ययन कर उन्हें अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया। छायावादी कवि युग वैषम्य के प्रति जागरूक थे। मानव जीवन में आने वाले विविध घात– प्रतिघातों से उत्पन्न पीड़ा और वेदना का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत कर उनके समाधान के लिए भी हमें प्रेरित किया है। जातीय अखण्डता व अस्मिता का जो खतरा प्रसाद युग में विद्यमान था, वो आज भी अपनी जड़े जमाया हुआ है। प्रसाद युग की अधिकांशतय समस्याएं आज भी किसी न किसी रूप में विद्यमान है। क्रान्तिदर्शी प्रसाद जी का युग संकट के जिस दौर से गुजर रहा था, वह संकट आज भी उपस्थित है। प्रसाद जी का काव्य तद्‌युगीन और वर्तमान संकट रूपी अंधकार को चीरता हुआ हमारा पथ प्रशस्त करते हुए ज्ञान रूपी दीपक का उजाला कर समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर रहा है। उस दीपक की लौ से आज भी हम अनेक समस्याओं का समाधान करने में सक्षम है।

संदर्भ सूची–

1. प्रसाद ग्रन्थावली, कानन–कुसुम (चित्रकुट कविता), सपां रत्नशंकर प्रसाद, पृष्ठ 209
2. प्रसाद ग्रन्थावली, कानन–कुसुम (चित्रकुट कविता), सपां रत्नशंकर प्रसाद, पृष्ठ 209
3. कामायनी, कर्म सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 94
4. कामायनी, इड़ा सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 116
5. प्रसाद ग्रन्थावली (कानन–कुसुम), पृष्ठ 204
6. कामायनी, संघर्ष सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 141
7. कामायनी, श्रद्धा सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 39
8. महाराणा का महत्व, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 18
9. कामायनी, कर्म सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 91
10. कानन–कुसुम, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 123
11. प्रसाद ग्रन्थावली, आंसू, सपा० रत्नशंकर प्रसाद, पृष्ठ 306
12. लहर, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 31
13. कामायनी, कर्म सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 84
14. प्रसाद ग्रन्थावली, करूणालय, सपां, रत्नशंकर, प्रसाद, पृष्ठ 109
15. कामायनी, आनन्द सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 215
16. कामायनी, संघर्ष सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 150
17. प्रसाद ग्रन्थावली, लहर (अशोक की चितां) सपां रत्नशंकर, प्रसाद, पृष्ठ 372
18. कामायनी, स्वपन सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 132

19. प्रसाद ग्रन्थावली, प्रेमपथिक, सपां रत्नशंकर, प्रसाद, पृष्ठ 96
20. कामायनी, आनन्द सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 179
21. कामायनी, श्रद्धा सर्ग, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 60
22. महाराणा का महत्व, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 15
23. झरना, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 73
24. प्रसाद साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, डॉ० प्रेमदत शर्मा, पृष्ठ 22
25. कानन–कुसुम (श्री कृष्ण जयंती), जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 15